Swar Sindhu: National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music
A UGC CARE listed Journal
ISSN 2320–7175 | Volume 10, Issue 01, January-June 2022
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org © The Author(s) 2022

सितार वादन के विकास क्रम में ध्रुपद गायन शैली का प्रभाव

GURDEEP SINGH SANDHU

Assistant Professor,School of Journalism, Film Production and Creative Arts –III, Lovely professional university

सार

संगीत एक परिवर्तनशील कला है, जो अत्यंत मनोहर एवं उत्कृष्ट है। जिसे समस्त ललित कलाओं में सर्वश्रेष्ठ स्थान प्राप्त है। संगीत एक सुखद अनुभूति है, जो मनुष्य के उन्नत संस्कार की द्योतक है। ध्रुवपद शैली की गम्भीरता का प्रभाव सितार वादन की शैली पर स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है, जिससे राग-रूप की व्याख्या गम्भीर हुई। ध्रुवपद शैली का प्रभाव सितार वादन के आलाप और गत अंग पर भी पड़ा। शुद्ध स्वर, मींड का प्रयोग, आलाप आदि में मुर्की का निषेध तथा ध्रुवपद के ही समान चारों अंगों यथा-स्थाई, अन्तरा, संचारी व आभोग का प्रयोग सितार वादन के आलाप अंग में किया जाता है। सितार में विलम्बित गत का विकास भी ध्रुवपद की बन्दिशों के आधार पर ही हुआ। प्रस्तुत शोध परिपत्र में सितार वादन पर ध्रुपद गायकी के प्रभाव को जानने का प्रयास किया गया है।

बीज शब्द: ध्रुपद, सितार, कंठ संगीत, मसीतखानी गत, रजाखानी गत,झाला, वाद्य संगीत।

भूमिका

संगीत में वाद्यों का महत्वपूर्ण स्थान है। गायन हो या नृत्य इन दोनों में ही वाद्यों के प्रयोग से उसकी अभिव्यक्ति पूर्ण होती है। संगीत जगत में वाद्य संगीत एवं कंठ संगीत एक दूसरे के पूरक हैं। किंतु इसके साथ साथ ही कंठ संगीत और वाद्य संगीत अपना अपना स्वतंत्र अस्तित्व भी धारण किये हुए हैं। शास्त्रीय संगीत में 18 वीं शताब्दी में कुछ तंत्री वाद्यों के स्वतंत्र वादन का प्रचार होने लगा एवं वाद्यों का प्रचार बढ़ा, किन्तु इस काल के सितार एवं उसके बाज का स्वरुप वर्तमान कालीन सितार एवं उसके बाज के स्वरुप से सर्वथा भिन्न था। 18 वीं शताब्दी के पश्चात से ही सितार वाद्य के स्वरुप एवं इसकी वादन शैली में महत्वपूर्ण परिवर्तन आये। जिन्होंने न सिर्फ सितार के प्राचीन स्वरुप को प्रभावित किया बल्कि इसकी वादन शैली को भी एक नया रुप प्रदान किया। कहां पहले सित्तार वाद्य का उपयोग एक संगत हेतु किया जाता था, वहीं इस काल में सितार वाद्य ने एक प्रमुख वाद्य का स्थान लेते हुए एकल वादन में बजाए जाने वाले वाद्य के रुप में प्रतिष्ठा अर्जित की।

धुपद दो शब्दों के मेल से बना है ध्रुवपद-धुपद । ”ध्रुव” शब्द का अर्थ है अचल। भरत के नाटयशास्त्र में धुवा शब्द मिलता है। यह धुवा गीत छंद में निबद्ध होते थे। इसके 18 अंगों का भरत ने वर्णन किया हैं। धुवा एक काव्य, स्वर तथा छंद से बद्ध रचना थी, जिसके सुनिश्चित अंग थे तथा उस गीत में यति, वर्ण, अलंकार, ग्रह आदि का सम्बंध अखण्ड रूप से सुनियोजित था।

धुपदरू (हिं०पु०) वह गद्य पद्यमय गंभीर आशय का गीत जिसमें देवताओं की लीला, राजाओं का यश अथवा बड़े बड़े युद्धों का वर्णन स्वर, ताल, राग रागिनी आदि के संयोग या भेल से गाया जाता है। धुपद को धुवका या धुपद, धुवषद भी कहते हैं।1

Swar Sindhu: National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music
A UGC CARE listed Journal
ISSN 2320–7175 | Volume 10, Issue 01, January-June 2022
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org © The Author(s) 2022

"संगीत में किसी विधा की उत्पत्ति मूल रुप से सर्वप्रथम मानव कंठ से हुई, उसके पश्चात विभिन्न अनुकूल वाद्यों द्वार उनको ग्रहण किया गया है। भारतीय संगीत के विकास का आदर्श कंठ संगीत ही रहा है। विभिन्न काल में विभिन्न विधाओं का उल्लेख गान रूप में होता रहा है। जैसे गान, जाति गान, प्रबन्ध गान आदि, फिर विभिन्न वाद्यों का आविष्कार या परिवर्तित रुप उन गायन विधाओं के अनुरुप करके सितार, सरोद आदि वाद्यों द्वारा ग्रहण किया गया।"2

सितार के प्रचलन से पूर्व वाद्यों में वीणा तथा गायन शैलियों में धुपद का वर्चस्व था। वीणा वादक धुपद की शैली का ही अनुसरण किया करते थे। 16वीं शताब्दी के पूर्वाध से ही ख्याल गायन शैली का उत्कर्ष आरम्भ हो गया था। गायकों की रुचि धुपद की अपेक्षा ख्याल गायन शैली की और होने लगी थी। दूसरी और वीणा में "दिर बोल का अभाव होने के कारण द्रुतलय का नाम सन्तोष जनक ढंग से नही हो पाता था। जब कि सितार में दिर बोल होने के कारण "द्रुतलय के काम में भी पर्याप्त आनन्द आ जाता था। ख्याल गायन शैली के उत्कर्ष के साथ ही द्रुतलय तथा तानों की और आकषर्ण बढा। फलस्वरुष अनेक वादकों ने वीणा की तुलना में सितार को प्राथमिकता देना आरम्भ कर दिया तथा उसे इतना सम्पूर्ण बना दिया कि वीणा वादक और धुपद गायक जिस कार्य को प्रधान समझते है उसे न छोडते हुए £याल तथा तराने तक का अंग स्पष्ट कर दिखाया। इसका परिणाम यह हुआ कि अच्छे सितार वादकों को धुपद तथा ख्याल दोनों की जानकारी हो गई।

"डा० लाल मणि मिश्र के शब्दों में यदि आज भारत में कोई भी ऐसा वाद्य हैं जो कि धुपद और ख्याल गायकी का पूर्ण ज्ञान प्राप्त कर सकें तो वह वाद्य सितार ही है।"3

आजकल सितार में गायकी अंग अथवा गायकी के प्रभाव को लेकर एक भ्रान्त धारणा प्रचलित है। कुछ कलाकारों द्वारा इनकों सितार में प्रचलित करने का दावा भी किया जाता है। परन्तु यदि सितार के विकास पर दृष्टि डालें तो देखेंगे कि सितार का वादन धुपद एवं बीन अंग से किया जाता रहा है। धुपद की नोमतोम तथा बीन शैली को सितार से अन्य वाद्यों ने अपनाया है। जिसे धुपद गायकी का प्रभाव कह सकते हैं। केवल ख्याल की बंदिश सितार पर बजा देना ही गायकी अंग नही है। इस प्रकार की बंदिशों के प्रचार में आने से बोलों की प्रधानता कम हुई है। सितार के बाज की मुख्य विशेषता बोलों में ही निहित है। गतों में प्रयुक्त बोलों के आधार पर ही घरानें की पहचान होती थी। इसी कारण प्राचीन परम्परावादी वादक बोलों को विशेष महत्त्व देते थे।

"उस समय धुपद की ही प्रथा थी, इसलिए जो भी विकास हुआ धुपद अंग से हुआ। सितार की आलाप शैली पर पूर्णतः बीन का ही प्रभाव है। बीन के मिजराब डग, डगड, डगड, आदि का सितार में दा रा दा, दा दिर दा रा, दिर दिर दा रा के रुप में प्रवेश हुआ है। सितार में पलटा का विकास इन बोलों पर विभिन्न तालों की मात्राओं के आधार पर हुआ। रुद्र बीन की तरह सितार में चिकारी के तारों का प्रयोग जयपुर सेनिया द्वारा किया गया जिसके फलस्वरुप ठोंक झाला का वादन सम्भव हो सका।"4

वर्तमान में सितार वादन पर धुपद गायकी का सम्पूर्ण प्रभाव है। धुपद गायन के विस्तार के मुख्य आधार राग, ताल, लय, और भाव है। सितार वादन पर धुपद का प्रभाव दर्शाने के लिये इन सभी तत्वों का पालन करना आवश्यक है। पहले मसीतखानी गतें धुपद शैली पर आधारित होती थी। आज कलाकार ख्याल के आधार पर बंदिश बजा रहे हैं। "पं० रविशंकर जी के वादन में कृन्तन सौंदर्य उपकरण का अधिक समावेश रहता है। अपने वादन को पं० जी ने धुपद और ख्याल दोनों अंगो से सुशोभित किया है। आलाप और जोड़ आलाप में पूर्ण रुप से धुपद अंग का अनुकरण करते है और

Swar Sindhu: National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music
A UGC CARE listed Journal
ISSN 2320–7175 | Volume 10, Issue 01, January-June 2022
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org © The Author(s) 2022

गतकारी में ख्याल अंग से तानों का वादन करते हैं। आपके वादन में आलाप, जोड़ झाला, ठोंक झाला, गत, तोड़, लड़ी, गुत्थाव, लड़लपेट, कृन्तन तार परन आदि क्रियाओं के मौलिक सिद्धान्त दृष्टिगोचर होते हैं।"5

सितार वादन पर धुपद के प्रभाव में राग को पूर्ण रुप से बजाने के लिये निम्नलिखित अंगो का वादन क्रमशः किया जाता है। आलाप, बहलावा, जोड़ आलाप, जोड़ झाला, गत, (मसीतखानी गत व रजाखानी गत) तान (तोड़े) झाला आदि।

ध्रुपद मे शब्दों की बहुलता रहती है। धुपद अंग के वादन में मिजराब के बोलों का ज्यादा प्रयोग रहता है। धुपद गायन में लयकारियां ली जाती है। सितार वादन में भी लयकारियां लेना धुपद का प्रभाव है। सितार वादन में गायक का गमक का प्रयोग विशेष ढंग से रागानुकूल हल्का व जोरदार प्रयोग भी धुपद का प्रभाव है। सितार वादन में विभिन्न मुर्की आदि तकनीकियों का प्रयोग करते है। धुपद में तान नहीं होती परन्तु वादन में तान ख्याल गायकी की तान की तरह ली जाती हैं।

सितार-वादन में जोड़ आलाप में धुपद का ज्यादा प्रभाव है। जोड़ आलाप करते समय भिन्न भिन्न लयकारियां करते हैं। आलाप करते समय एक एक स्वर की बढ़त करते हैं। यदि आलाप अति संक्षिप्त रुप में बजाना हो तो राग के ऐसे स्वर समुदायों को लिया जाता है। जो कि राग को स्पष्ट रुप से अवतरित कर देते हैं। इस तरह की क्रिया में कम से कम स्वर बाजाकर राग को स्पष्ट कर लिया जाता है। तथा कई बार तीनों सप्तकों को छू लिया जाता है। यह क्रिया बहलावा कहलाता है। बहलावा या आलाप के पश्चात् जोंड आलाप किया जाता हैं। जोंड आलाप में एक लय कायम की जाती है। तथा भिन्न-भिन्न लयकारियां दिखाई जाती है। इसमें सारा प्रभाव धुपद का ही है। धुपद की विशेषताओं का सारा प्रभाव सितार वादन के जोंड आलाप पर है। सितार में मंद्र सप्तक व अति मंद्र सप्तक में जब गमक आदि क्रियाओं द्वारा वादन किया जाता हैं तो यह गंभीरता की अनुभूति प्रदान कर धुपद शैली का आभास कराता है। क्योंकि यह जोरदार गायकी है। जैसे पं. रविशंकर जी लरज व खरज की तारों पर अति मंद्र सप्तक का आलाप करते हैं तो वह धुपद की गम्भीर गायकी का आभास इन तारों पर वादन करके करा देते हैं।

पहले गत वादन का सितार पूर्णतरू धुपद गायन से प्रभावित था। गत प्रारम्भ करके इसका विस्तार मिजराब अथदा जवा के बोलों द्वारा धुपद के बोल बांट अथवा लयकारी के समान होता था। विलम्बित ख्याल गायन के दूसरे चरण का विस्तार बहलावा से होता है। यह बहलावा बीन अंग के जोंड आलाप से प्रभावित है। सितार में गत वादन के विस्तार में भी दूसरा चरण बहुधा बहलावे की तरह होता है। एक तरह से इसमें जोंड आलाप के अंश की पुनरावृति होती है। अथार्त् ख्याल गायन तथा सितार वादन के दूसरे चरण के विस्तार पर बीन अंग प्रभावी है। ओर बीन अंग धुपद से अतरू यह कह सकते है कि इन दोनों विधाओं के विस्तार के इस चरण में धुपद अंग का प्रभाव है। सितार वादन के तृतीय चरण में विशेषतरू विभिन्न लयकारियों का वादन होता है। जिसमें विभिन्न लयकारी के तोड़े प्रायः तिहाइयों से सुसज्जित करके बजाए जाते है। इसके लिए इतना ही कह देना उचित होगा कि इसका आधार धुपद गायन शैली से प्रभावित है। "इन लयकारियों में वाद्य की मर्यादा के साथ वादक की अपनी स्वतन्त्र कल्पना का प्रभाव अधिक है तथा गत विस्तार चरण में प्रत्येक तन्त्रकार घराने की अपनी अपनी विशेषताएं अधिक महत्त्व रखती हैं।"6

धुपद अंग से वादन करते समय आकार की कम व सितार के बाज के तार पर मिजराब के बोलों की ज्यादा प्रधानता रहती है। मींड व गमक का प्रयोग ज्यादा होता हैं। गम्भीर्य पूर्ण वादन जो कि सितार वादन के जोंड आलाप के पक्ष में ज्यादा दिखाई देता है। वर्तमान में सितार वादन पर धुपद गायकी का प्रभाव स्पष्ट रुप से दिखाई देता है।

Swar Sindhu: National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music
A UGC CARE listed Journal
ISSN 2320–7175 | Volume 10, Issue 01, January-June 2022
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org © The Author(s) 2022

18वीं व 19वीं शताब्दी तक सितार एक प्रचलित वाद्य के रुप में स्थापित हो चुका था तथा सेनिया घरानें के सितार वादकों द्वारा प्रचलित गत वादन शैली का विकास हो चुका था। इस समय के लगभग सभी प्रमुख सितार वादक सितार पर वादन के दोनों रजाखानी व मसीतखानी तथा झाला वादन एंव धुपद अंग की आलाप चारी आदि का वादन करते थे। आधुनिक काल में सितार वादन के दो आधार स्तंभघरानें इमदादखानी घरानें व मैहर सेनिया घरानें के वादको द्वारा प्रयोग में लाए जाने वाले सितारों का बहुत प्रचलन है। "सितार वादन के मैहर सेनिया घरानें के प्रर्यात सितार वादक पं० रविशंकर जिस त्तरह के सित्तार पर बादन करते हैं। उसमें उन्होनें अति मंद्र प, व अति मंद्र सा, के तार डाले हैं, जिन्हें लरज व खरज का तार कहा जाता है। इन तारों के दबाव व खिंचाव को सितार का ढांचा ठीक तरह से सह पाए इसके लिए ये सितार अपेक्षाकृत बड़ें व भारी होते हैं। लजज व खरज के तारों पर काम करते हुए ध्वनि की स्पष्टता बनी रहें व गूंज भी अधिक मिले इस दृष्टि से इस सितार में ऐप की और एक अतिरिक्त तूंबे का भी प्रयोग किया जाता हैं। इसके डांड की चैडाई लगभग सवा तीन या साढें तीन इंच के मध्य या इससे भी एक दो सूत अधिक होती है। इस शैली के सितारों में सजावटी काम अधिक किया जाता है एंव इन सितारों में तरबों की संर्या 13 होती है।"7

मियां तानसेन ने अपने समय में प्रचार प्रसार में अत्यधिक योगदान दिया। तानसेन को ही सेनिया घरानें का आदि पुरुष माना जाता है। परन्तु इनकी मुत्यु के पश्चात् इनके वंशज के दो भाग बंट गए। जिन्हें बीनकार और रबाबिए कहा गया है। बीनकारों ने स्वर और रबाब वादकों ने लय को प्रधानता दी। सितार को उत्तर भारत का अत्यधिक प्रचलित वाद्य बनाने में तानसेन के वंशजों (सेनियों) का अभूतपूर्व योगदान रहा है। उन्होनें रि.तार पर बीन तथा धुपद के सौदर्य तत्त्वों का प्रयोग कर इस वाद्य के वादन को अत्यधिक रोचक बना दिया। बीनकारों ने बीन की समस्त क्रियाओं का सितार पर प्रयोग किया। किन्तु रबाब वादकों तथा उनके वश के सितार वादकों से ऐसा न हो सका। परिणामस्वरुप कालान्तर में बीन अंग का सितार वादन ही अधिक प्रचलित हुआ।

विद्वानों का ऐसा मत है कि सितार में आलाप तथा गत विस्तार के लिए धुपद की चार बानियों में से गौहर बानी, डागुर बानी, नौहर बानी का भी बहुत हद तक अनुसरण किया गया। सितार में जोड़ का भाग खण्डहार बानी का ही अनुसरण है। तत्कालीन वादक जोड़ वादन में छन्दबद्द रुप का वादन करते थे तथा लड़ी अंग व तारपरन की सहायता से स्वर विस्तार करते थे एवंम् अंग से कई वादक परवावज की संगति आरम्भ करा देते थे। सितार वादन की इस तरह की वादन शैली में कुछ तत्कालीन वादकों ने आलाप एंव जोड़ आलाप के बाद धुपद के आधार पर विभिन्न गतों के निमार्ण की शुरुआत की। "इस तरह की गतों अथवा सितार पर बजाए जा सकने वाली गतों के बारे में उल्लेख करते हुए नवाब अश्फाक अलीखां ने अपनी पुस्तक नगमातुलहिन्द की भूमिका में मोहम्मद शाह रंगीले के दरबारी गायक नियामतखा (शाहसदारगं) को सितार पर बजाये जा सकने योग्यगत का प्रथम रचनाकार माना है। नियामतखां के पश्चात् सितार की गतों के निमार्ण में नियामत खां के छोटे भाई खुसरो खां के पुत्र फिरोज खां का नाम विशेष उल्लेखनीय है। उन्हें मुख्यतःरू ख्याल अंग की बंदिशों का रचनाकार भी माना जाता है। इन्होंने सितार पर बजाई जा सकने वाली अनेक गतों की भी रचना की।"8

रहीमसेन ने सितार के आलाप के भाग में धुपद अंग और गत में बोल बांट के काम में रबाब और बीन की वादन शैली का अनुसरण किया। चूंकि उस काल में धुपद शैली का ही सर्वाधिक विस्तार था। अतरू सितार वादन में भी धुपद गायन में की जाने वाली लयकारी तथा उपज अंग का प्रभाव पहले वीणा पर पडा तत्पश्चात सितार पर इसका प्रभाव पडा। रहीम

सेन ने अपने सितार वादन में मिजराब के बोलो को अत्यधिक चमत्कारपूर्वक प्रस्तुत करके अपने सितार वादन को अधिक रोचक बनाया। रहीम सेन की सितार वादन पद्वति में सर्वप्रथम आलाप जोंड बजाने के पश्चात उसी राग की गत बजाने की प्रथा थी तथा गतकारी में गत के ही विभिन्न बोलों को अलग-अलग स्थानों से उठाकर सम पर लाया जाता था। गत का प्रदर्शन विभिन्न लयों में भी किया जाता था।

फलस्वरुप वीणा अंग की वादन पद्धति का ही सितार वादन में अनुसरण हुआ। आलाप, जोड़ आलाप और झाला वीणा का मोलिक रुप और सोदर्य है। उक्त तीनों प्रकार के बान से ही यंत्र संगीत मुख्यतःरू सितार वादन प्रणाली का उदय हुआ। वीणा वादन प्रणाली से सितार वादन के अधिक प्रभावित होने का मुख्य कारण यह भी है कि आलाप, जोड़ आलाप, गत वादन आदि क्रम रबाब वाद्य में प्राप्त नही थे। अतरू सितार के बाज पर वीणा अंग की वादन क्रिया का ही मुख्य प्रभाव पडा। तत्कालीन सितार वादकों ने अपने वादन में आलाप भाग की धुपद अंग से तथा बोल बांट के समस्त कार्य को बीन और रबाब अंग से प्रदर्शित किया एंव सितार वादन में आलाप, जोड़ा आलाप, गत, तोड़ा, लड़ी, गुत्थाव में वीणा की वादन शैली का पूर्ण बना रहा तथा लड़ लपेट, कत्तर और तारपरन रबाब की मुख्य वादन क्रिया है। अतरू बोल प्रधान गतकारी रबाब वाद्य की देन है। यह कहना गलत न होगा कि सितार का आलाप भाग धुपद से प्रभावित होने के कारण आलाप भाग धुपद अंग से तथा गत में बोल बांट का काम बीन और रबाब अंग से ही किया जाता है।

निष्कर्ष

इस प्रकार सितार वादन पर धुपद का प्रभाव प्राचीन काल से ही रहा है। पहले धुपद गायन शैली के साथ वीणा पर संगति की जाती थी। पहले सितार को भी वीणा कहते थे। सितार की उत्पत्ति भी वीणा से ही मानी जाती हे जैसे त्रितंत्री वीणा, महत्ती वीणा आदि। आज वीणा का स्थान सितार ने ले लिया है। सितार पर धुपद का सम्पूर्ण प्रभाव देखा जा सकता है आलाप से लेकर गत -वादन तक धुपद अंग की गतें भी सितार पर बजाई जाती हैं।

संदर्भ सूची

भार्गव आदर्श हिन्दी शब्दकोश (2016), भार्गव बुक प्रकाशक , पृ० 401
मिश्रा डॉ० अरुण (2018) भारतीय कंठ संगीत और वाद्य सगीत, अनुराग प्रकाशक, पृ० 78
शर्मा भगवत शरण (1958) सितार मालिका, संगीत कार्यालय हाथरस, पृ० 18
भार्गव डॉ० अंजना (2009) भारतीय संगीत शास्त्रो में वाद्यों का चिन्तन, कनिष्क प्रकाशक, पृ० 208
मिश्रा डॉ० अरुण (2018) भारतीय कंठ संगीत और वाद्य सगीत, अनुराग प्रकाशन, पृ० 91,92
राय, वी०एस० डा० सुदीप (2016) जहान ए सितार, कनिष्क प्रकाशन, पृ० 53
राय, वी०एस० डा० सुदीप (2016) जहान ए सितार, कनिष्क प्रकाशन, पृ० 66